International Journal of Applied Research 2016; 2(2): 172-174

ISSN Print: 2394-7500 **ISSN Online:** 2394-5869 **Impact Factor:** 5.2
IJAR 2016; 2(2): 172-174
www.allresearchjournal.com
Received: 09-12-2015
Accepted: 11-01-2016

डॉ. शिवदत्त शर्मा
पूर्व अध्यक्ष हिन्दी विभाग
राजकीय महाविद्यालय ढलियारा
कांगडा हि.प्र.

Correspondence
डॉ. शिवदत्त शर्मा
पूर्व अध्यक्ष हिन्दी विभाग
राजकीय महाविद्यालय ढलियारा
कांगडा हि.प्र.

प्राचीन साहित्य में आयुर्वेद

डॉ. शिवदत्त शर्मा

भारत विश्व भर में अपने दर्शन के कारण आदर की दृष्टि से देखा जाता है। प्राचीन संस्कृत साहित्य में ज्ञानविज्ञान नीति और नैतिकता के जो मानदण्ड स्थापित किए गए हैं वे आज भी विश्व का मार्गदर्शन करने में सफल हैं। इसी तरह प्राचीन साहित्य में आयुर्वैदिक चिकित्सा पद्धति का भी उल्लेख अनेक प्राचीन ग्रंथों में मिलता है। प्राचीन संस्कृत ग्रंथों तथा अन्य ग्रंथों में आयुर्वेद का उल्लेख होना इस तथ्य को प्रकट करता है कि भारत में ही आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति का उद्भव और विकास हुआ। यह सबसे प्राचीन चिकित्सा पद्धति थी इसमें कोई सन्देह नहीं। आयुर्वेद कितना लोकप्रिय रहा होगा इसका प्रमाण इतना ही पर्याप्त है कि परवर्ती सभी मूल ग्रंथों में आयुर्वेद का उल्लेख अवश्य मिल जाता है।सुश्रुत संहिता के अनुसार भारत में आयुर्वेद की उत्पत्ति दैवी उत्पत्ति है।[1]

सर्वप्रथम वैदिक साहित्य में ही आयुर्वेद का उल्लेख मिल जाता है। वैदिक साहित्य के अन्तर्गत जिन ग्रंथों की गणना की जाती है, उनमें चारों वेद, ब्राह्मणग्रंथ, आरण्यक, तथा उपनिषद् आते हैं। ऋग्वेद् वैदिक साहित्य में सबसे प्राचीन माना जाता है। ऋग्वेद् की रचना आज से लगभग 6000 वर्ष पूर्व की मानी जाती है।

ऋग्वेद् में आयुर्वेद

विश्व के प्राचीनतम ग्रंथ ऋग्वेद् में आयुर्वेद के विषयों की प्रभूत जानकारी प्राप्त होती है। ऋग्वेद में कामचिकित्सा और शल्यचिकित्सा के अतिरिक्त पशुचिकित्सा, सूर्यचिकित्सा, जलचिकित्सा और अग्निचिकित्सा के भी उदाहरण मिलते हैं। ऋग्वेद् में ही देव–वैद्यों का भी उल्लेख मिलता है। रूद्र, अग्नि, इन्द्र, वरूण, मरूत् और अश्विनीकुमार का देव–वैद्यों के रूप में उल्लेख किया गया है। इन में अश्विनीकुमार और इन्द्र आयुर्वेद–चिकित्सा में विशेष प्रसिद्ध थे। सुश्रुत् के अनुसार भूतल पर आयुर्वेद को लाने का श्रेय धन्वन्तरि को है, जिसने इन्द्र से इस ज्ञान को प्राप्त किया था। गोपथ ब्राह्मण में भेषज को अथर्व कहा गया है।[2]

अश्विन कुमारों को अस्थिरोग, कर्णरोग, नेत्ररोग, दन्तरोग, कुष्ठरोग, स्त्रीरोग, कामरोग में विशेषज्ञ माना गया है। ये वही अश्विनकुमार हैं जिन्होंने वृद्ध च्यवन ऋषि को यौवन प्रदान किया, राजा मान को पुत्ररत्न दिया, श्राव का कुष्ठ रोग दूर किया, नृशद् के पुत्र का गंजापन दूर किया, पृषन् के टूटे दान्तों को ठीक किया, ऋजाश्व के अन्धेपन को दूर किया, दधीचि के सिर को काट कर पहले वहां घोडे के सिर का प्रत्यारोपण किया, फिर उसकी जगह असली सिर का प्रत्यारोपण किया। राजकन्या विशाला की टूटी टांग के स्थान पर लोहे की टांग जोड दी।

इन्द्र के विषय में भी उल्लेख है कि इन्द्र ने अन्धे परावृज को दृष्टि दी। इसके अतिरिक्त श्रोण के लंगडेपन को भी ठीक करने का प्रमाण मिलता है।

ऋग्वेद् में ही आयुर्वेद के मूल सिद्धान्त त्रिदोष; वात पित्त कफ का भी संकेत मिलता है। इसी वेद में ही ओषधिसूक्त में आमूल औषधियों का उल्लेख है।सोम को औषधियों का राजा कहा गया है।[3]

यजुर्वेद यद्यपि यज्ञों से सम्बन्धित है फिर भी इसमें भी अनेक औषधियों का उल्लेख इस बात का प्रमाण है कि आयुर्वेद का प्रचार–प्रसार उस समय ही प्रारम्भ हो गया था अन्यथा अनेक औषधियों का उल्लेख कैसे सम्भव होता। अनेक रोगों का उल्लेख भी इसी बात को प्रमाणित करता है। यक्ष्मा उन्माद हृदयरोग कुष्ठ श्लीपद अर्श आदि का ऋचाओं में उल्लेख मिलता है। इसी तरह रोगनिवारक कुछ ऋचाएं भी मिलती हैं।

अथर्ववेद आयुर्वेद–ज्ञान से ओतप्रोत है। इसमें शरीर में विद्यमान 360 अस्थियों का उल्लेख है। सैकडों–हजारों शिराओं और धमनियों का वर्णन मिलता है। इससे प्रतीत होता है कि वैद्यों को न केवल औषधियों व रोगों की जानकारी थी अपितु उन्हें शरीर के भीतरी अंगों का भी भलीभान्ति ज्ञान था। इसी वेद में वाजीकरण विषविज्ञान शल्य शालक्य प्रसूति त्रिदोष आदि रोगो के नाम तथा उनके

उपचार आदि के बारे में विस्तृत जानकारी दी गई है।[4] शतपथ ब्राह्मण में भी 308 अस्थियों का उल्लेख है। बृहदारण्यक उपनिषद् में विशेष प्रकार के गुणों से सम्पन्न सन्तान प्राप्त करने के लिए विशेष प्रकार के भेाजन के सेवन का निर्देश है।[5]

पुराणों में आयुर्वेद

पुराणों मे आयुर्वेद के विभिन्न रूप भी मिलते हैं। मानव–आयुर्वेद के अतिरिक्त पशु आयुर्वेदं और वृक्ष आयुर्वेद की भी सामग्री उपलब्ध होती है। अग्निपुराण, में विविध रोगों का, रोगनाशक औषधियों का मृत संजीवनी नामक सिद्धयोगों का और अनेक प्रकार के कल्पयोगों का सविस्तार विवरण मिलता है।[6]

गरूड पुराण में ज्वर, रक्त–पित्त, कास, श्वास, आदि रोगों के निदान, औषधियों की विस्तृत सूची का, द्रव्यगुणका, गारूडी अर्थात् सर्पदंशहारक विद्या का भी उल्लेख मिलता है। इससे यह प्रमाणित होता है कि पुराण काल में भी आयुर्वेद भारतीयों के रोग निदान में महत्व पूर्ण भूमिका निभाता रहा होगा।[7]

शिवपुराण में उल्लेख है कि जब शिव ने दक्ष का शिरच्छेद कर दिया तो अश्विन कुमारों ने दूसरे सिर का प्रत्यारोपण किया था। इसी तरह श्री गणेश जी के बारे में भी एक हाथी के सिर का प्रत्यारोपण करने का उल्लेख मिलता है।[8]

इसके अतिरिक्त पशुओं की चिकित्सा के अनेक उदाहरण पुराणों में प्राप्त होते हैं। अग्नि पुराण में वृक्षों, लताओं, गुल्मों, में लगने वाले विभिन्न रोगों की औाधियों का वर्णन मिलता है।

वाल्मीकि–रामायण में आयुर्वेद

वाल्मीकि रामायण में अनेक स्थलों पर इस तथ्य के प्रमाण मिलते हैं कि भारत के लोगों को रामायण काल में आयुर्वेद का ज्ञान था। उन्हें मृत और जीवित व्यक्ति के लक्षणों का भी पूरा ज्ञान था। रामायण में लक्ष्मण के मूर्च्छित होने पर सुषेण नामक वैद्य के द्वारा लक्षणों पर आधारित परीक्षण से ही ज्ञात हो सका कि लक्ष्मण मृत नहीं अपितु जीवित हैं।

हनुमान को बताया गया था कि पर्वत पर मृतसंजीवनी, विशल्यकरणी, सावर्ण्यकरणी और सन्धानकरणी नाम की चार प्रकार की जडी बूटियां हैं, जिन्हें लक्ष्मण को होश में लाने के लिए तुम्हें लाना है, और ऐसा हुआ भी जिसका उल्लेख वाल्मीकि रामायण में मिलता है। रामचरित मानस में भी इस घटना का उल्लेख है।[9]

भरत के नाना के घर से आने तक दशरथ के शव को सुरक्षित रखने के लिए तेल का औषधि के रूप में प्रयोग किया गया था। इस वैद्यक विधि का प्रयोग सुफल रहा था। आज भी भारत और दुनिया के अनेक देश इसी विधि का प्रयोग करते हैं। चीन तथा अन्य देशों में ममी इसी तरह सुरक्षित रखे जाते हैं। इससे प्रतीत होता है कि रामायण काल में भी आयुर्वेद का समुचित ज्ञान लोगों को था तथा अपने जीवन में निदान के लिए भी वे प्रयोग में इसे लाते थे।

अनेक पर्ण औषधियों की भी चर्चा रामायण में मिलती है। सप्त पर्ण, असन, अर्जुन, कुटज, अशोक, सप्तच्छद, कदम्ब, जैसे अनेक औषधीय वृक्षों और उनके पत्तों का रोग निदान के लिए विशेष उल्लेख रामायण में मिलता है। इससे यही प्रमाणित होता है कि उस समय के समाज में रोग निदान के लिए आयुर्वेद मुख्य चिकित्सा पद्धति थी।

महाभारत में आयुर्वेद

महाभारत वर्गचतुष्ट्य के लिए जाना जाता है। इसके अतिरिक्त आयुर्वेद का भी उल्लेख इसमें सर्वत्र मिलता है। महाभारत में आयुर्वेद के प्रसिद्ध वैद्यों का उल्लेख और उनकी उपलब्धियों का वर्णन मिलता है। धन्वन्तरि, अश्विनीकुमार, कृष्णात्रेय, शालिहोत्र, सुश्रुत, और कश्यप आदि आचार्यों का उल्लेख अनेक स्थलों पर हुआ है। आचार्य धन्वन्तरि समुद्रमन्थन से प्रकट हुए तथा अश्विनकुमारों को देवताओं के वैद्य के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त हुई। इसी तरह कृष्णात्रेय को चिकित्सक के रूप मे, शालिहोत्र को अश्व–वैद्य के रूप में, कश्यप को विषावतारक वैद्य के रूप में वर्णित किया गया है।

महाभारत में विष–सम्बन्धी कई उल्लेख मिलते हैं। विष उतारने के लिए मन्त्र विद्या के अतिरिक्त औषधियों का भी उल्लेख मिलता है। महाभारत में ही जठराग्नि के प्रकार पांच प्रकार की वायु, वात, पित्त, कफ नामक तीन दोषों तथा तीन प्रकार के सत्व, रज, तम नामकगुण, पंच महाभूत आदि का विशद वर्णन मिलता है जो पूर्णतः आयुर्वेद पर आधारित है। आज भी आयुर्वेद इन्हीं मूल सिद्धान्तों पर आधारित ही चिकित्सा एवं निदान करता हैं।

ज्वर, यक्ष्मा, स्कन्धग्रह, स्कन्धापरमार, आदि अनेक रोगों का उल्लेख महाभारत में है। इनके साथ ही इन रोगों का उपचार भी आयुर्वेद पर आधारित वर्णित है। अश्विनीकुमारों द्वारा मान्धाता के पेट का विदारण, अजीर्ण और ग्रहणी रोग का उपचार, चन्द्रमा के रोहिणी पर आसक्त होने से उत्पन्न हुए राजयक्ष्मा रोग के उपचार का उल्लेख महाभारत में मिलता है।

इसके अतिरिक्त आज की ही तरह स्टेम–सेल तकनीक द्वारा अंगों के निर्माण की विधि का वर्णन भी महाभारत में मिलता है।गान्धारी को दो वर्षों तक गर्भ धारण करने पर भी जब सन्तान नहीं हुई थी तो उस ने तंग आकर गर्भपात कर लिया था। गर्भ पात से निकले मांस के लोथडे पर औषधियां लगा कर उस के सौ टुकडे कर के सौ पात्रोंमें रखा गया था। इन्हीं सौ टुकडों से सौ कौरव पैदा हुए थे।

इससे प्रतीत होता है कि आयुर्वेद उस समय कितना लोकप्रिय था और चिकित्सीय दृष्टि से कितने शिखर पर था।

जैनसाहित्य में आयुर्वेद

जैन साहित्य में भी आयुर्वेद का भी समुचित उल्लेख किया है। जैन साहित्य में वैद्य को प्राणाचार्य कहा गया है। जैन धर्म के आगम ग्रंथों में आयुर्वेद के आठ अंगों का उल्लेख किया गया है। चिकित्सा के यहां चार पाद बताए गए हैं–वैद्य, रोगी, औषधि और परिचर्या, आयुर्वेद को प्राणवाय कहा गया है।

बौद्ध साहित्य में आयुर्वेद

त्रिपिटक में भी आयुर्वेद–सम्बन्धी सामग्री मिलती है। त्रिपिटकों में बुद्ध के उपदेशों का ज्ञान संचित है।पिटकों की संख्या तीन होने के कारण ही इन्हें त्रिपिटक कहा जाता है। विनय पिटक, सुत्तपिटक, और धम्मपिटकये तीन पिटक हैं। प्रत्येक पिटक में अनेक ग्रंथ हैं। अन्तर्विरोधों के कारण बौद्ध धर्म दो शाखाओं में बंट गया–हीनयान तथा महायान। बौद्ध साहित्य में काय चिकित्सा के अनेक रोगों का उल्लेख मिलता है। रोग की उत्पत्ति के आठ कारण बताए गए हैं। इनमें वात, पित्त, कफ, त्रिदोष–सन्निपात, ऋतुपरिणाम, विषम आहार, बाह्यवातावरण और कर्म विपाक।[10]

त्रिपिटक में 325 वनस्पतियों का उल्लेख मिलता है, जिनका प्रयोग रोग–निवारण में होता था। बौद्ध काल में शल्यचिकित्सा का पर्याप्त प्रचार हो गया था। वैद्य राज जीवक ने राजपरिवार के विशिष्ट व्यक्ति के सिर के कीडों का सफल इलाज किया था। जीवक वैशाली, साकेत आदि जा कर महाजनों के रोगों का उपचार करते थे। महावग्ग के अनुसार जीवक ने किसी सेठ के पेट की शल्य चिकित्सा करके आंतों को पुनः स्थापित करके उस की उदर–पीडा को दूर किया था।

प्राचीन भारत में पशुचिकित्सा

आयुर्वेद का सदुपयोग मानव के अतिरिक्त पशुचिकित्सा के लिए भी प्राचीन काल से ही होता आया है। प्रायः प्राचीन काल में आयुर्वेद का प्रयोग तीन प्रकार से हुआ है। मानव आयुर्वेद, पशु–आयुर्वेद और वृक्ष–आयुर्वेद। यह तो स्वाभाविक ही है कि मानव और पशुओं का सम्बन्ध बहुत ही अन्तरंग रहा है क्योंकि दोनों परस्पर निर्भर थे। अपने जीवन में दुधारू पशुओं की

आवश्यकताऐ थी ही परन्तु अनाज पैदा करने उसके संरक्षण, परिवर्धन के लिए भी मानव पशुओं पर ही निर्भर था। के युद्धों आदि में भी घोडे हाथी आदि की आवश्यकता सर्वविदित है। उनको स्वस्थ रखने के लिए, तथा रोग हो जानेपर उनका ठीक उपचार करने के लिए आयुर्वेद ने महत्व पूर्ण भूमिका निभाई। पशुचिकित्सा के तीन प्रमुख प्रकार धीरे–धीरे विकसित हो गए– गजायुर्वेद, अश्वायुर्वेद, और गो–आयुर्वेद। इसी पर आधारित तीनों प्रकार के उपचार के आयुर्वेद के ग्रंथ भी प्राप्त होते हैं[11]

1 नीलकण्ठ – मातंगलीला
2 बृहस्पति – गजलक्षण
3 शालिहोत्र – शालिहोत्रसंहिता
4 अश्व–शास्त्र
5 अश्व–वैद्यक
6 हय–लीलावती

इस तरह इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि प्राचीन काल से ही आयुर्वेद का प्रचार प्रसार एवं सदुपयोग मानव और मानवेतर चिकित्सा के लिए होता रहा है। शल्य चिकित्सा में भी सुश्रुत जैसे वैद्यों का स्थान बडे आदर के साथ समाज में लिया जाता था। अन्य वैद्य भी अपने दैविक गुणों के कारण समाज में पूज्य थे। आज भी चरक सेहिता आदि ग्रंथ आयुर्वेद के मूल ग्रंथ माने जाते हैं। भरत से ही विकसित होकर आयुर्वेद चीन, श्रीलंका आदि में फैला तथा चिकित्सा का सर्वाधिक लोकप्रिय हुआ।आज भी आयुर्वेद में अनेक असाध्य रोगों का सफलता पूर्वक इलाज किया जाता है। इसके लिए और अधिक अनुसन्धान की आवश्यकता है तथा इसे आधुनिक तकनीक से जोडने की आवश्यकता है जिससे इसमें छुपाज्ञान समाज के लिए प्रभावी ढंग से प्रयोग किया जा सके। यह सरकारी प्रश्रय मिलने पर और अधिक प्रभावी हो सकता है।

सन्दर्भ सूचि

1. आचार्य सुश्रुत संहिता पृ 39
2. यद् भेषजं तद् अमृतम् अथर्व वेद
3. ऋग्वेद् सोम सूक्त
4. शतपथ ब्राह्मण तासरा सूक्त
5. बृहदारण्यक् 8.4.13
6. अग्नि पुराण 2.–4–11
7. गरूड पुराण छटा अध्याय
8. शिवपुराण 14.20
9. रामचरितमानस लंकाकाण्ड
10. त्रिपिटक अध्याय 4.1.9
11. प्राचीन शिलालेख हडप्पा और मोहन जोदडो